International Research Journal of Education and Technology (IRJEdT)
‖ ISSN: 2581-7795, Impact Factor 5.007 ‖
‖ Peer-Reviewed | Open Access | International Journal ‖
‖ Volume: 02 | Issue: 01 | Jan- 2019 | www.irjweb.com ‖

राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में आर्य समाज के शैक्षिक आंदोलनों का समाजशास्त्रीय अध्ययन

स्वर्णलता रानी, समाजशास्त्र विभाग की शोधार्थी, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार, भारत

सारांश

उन्नीसवीं शताब्दी का भारतीय समाज सामाजिक, धार्मिक एवं शैक्षिक कुरीतियों — बाल-विवाह, सती प्रथा, विधवाओं की दुर्दशा, जातिगत भेदभाव तथा स्त्री-शिक्षा के अभाव — से गहरे रूप से ग्रस्त था। औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत शिक्षा व्यवस्था सीमित, वर्ग-विशेष तक केंद्रित तथा भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों से क्रमशः दूर होती जा रही थी। ऐसे संक्रमणकालीन समय में स्वामी दयानन्द सरस्वती (1824–1883) द्वारा 10 अप्रैल 1875 को मुम्बई में स्थापित आर्य समाज ने शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन एवं राष्ट्र-निर्माण का सर्वाधिक प्रभावी माध्यम माना। आर्य समाज ने दयानन्द एंग्लो वैदिक (डी.ए.वी.) संस्थानों, गुरुकुल शिक्षा प्रणाली, महिला शिक्षा संस्थानों, नैतिक शिक्षा तथा वैदिक मूल्यों पर आधारित आधुनिक शिक्षा के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक समरसता एवं नागरिक उत्तरदायित्व को विकसित करने का व्यवस्थित प्रयास किया। प्रस्तुत शोध आलेख समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण — विशेषतः संरचनात्मक-कार्यात्मकवाद, आधुनिकीकरण सिद्धांत तथा सामाजिक परिवर्तन सिद्धांत — के आधार पर आर्य समाज के शैक्षिक आंदोलनों का विश्लेषण करता है और यह स्पष्ट करता है कि शिक्षा के माध्यम से आर्य समाज ने भारतीय समाज में सामाजिक परिवर्तन, स्त्री-सशक्तीकरण और राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया को किस प्रकार गति प्रदान की। आलेख में डी.ए.वी. आंदोलन (1886), गुरुकुल कांगड़ी आंदोलन (1902) तथा कन्या महाविद्यालय आंदोलन (1893 से) का ऐतिहासिक विवरण देते हुए महिलाओं के संघर्ष, सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध किए गए आंदोलनों तथा वर्तमान राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में इसकी समकालीन प्रासंगिकता की भी चर्चा की गई है।

मुख्य शब्दः *आर्य समाज, राष्ट्र निर्माण, शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन, डी.ए.वी. आंदोलन, गुरुकुल शिक्षा, स्त्री-शिक्षा, समाजशास्त्र।*

International Research Journal of Education and Technology (IRJEdT)
║ ISSN: 2581-7795, Impact Factor 5.007 ║
║ Peer-Reviewed | Open Access | International Journal ║
║ Volume: 02 | Issue: 01 | Jan- 2019 | www.irjweb.com ║

1. प्रस्तावना

शिक्षा किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास का आधार मानी जाती है। यह केवल ज्ञान प्रदान करने का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक मूल्यों, राष्ट्रीय चेतना, नागरिक उत्तरदायित्व तथा सामाजिक एकता का निर्माण करने वाली संस्था भी है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से शिक्षा समाजीकरण (Socialization), सामाजिक नियंत्रण, सामाजिक गतिशीलता (Social Mobility) तथा सामाजिक परिवर्तन का प्रमुख साधन मानी जाती है। एमिल दुर्खीम ने शिक्षा को "समाज द्वारा नई पीढ़ी का व्यवस्थित समाजीकरण" कहा, जबकि भारतीय संदर्भ में शिक्षा सदैव धार्मिक-सांस्कृतिक मूल्यों से भी जुड़ी रही है।

औपनिवेशिक भारत में अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली का मूल उद्देश्य प्रशासनिक कर्मचारियों तथा दुभाषियों का निर्माण करना था। 1835 में लॉर्ड मैकाले की शिक्षा नीति ने अंग्रेजी माध्यम को वरीयता दी, जिससे भारतीय समाज में राष्ट्रीय भावना, वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा सामाजिक समानता का पर्याप्त विकास नहीं हो सका, और शिक्षा केवल शहरी उच्च वर्ग तक सीमित रह गई। ऐसे समय में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने शिक्षा को सामाजिक सुधार, आत्मनिर्भरता, नैतिक विकास एवं राष्ट्रीय जागरण का सशक्त माध्यम माना।

"अविद्या ही समस्त दुःखों का मूल कारण है, और विद्या ही मनुष्य तथा समाज को उन्नति के मार्ग पर ले जाती है" — इस भावना पर आधारित शिक्षा-दर्शन दयानन्द सरस्वती के सम्पूर्ण सामाजिक चिंतन का केंद्र-बिंदु रहा।

दयानन्द सरस्वती ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' (प्रथम संस्करण 1875, संशोधित संस्करण 1884) में शिक्षा, समाज-सुधार तथा स्त्री-पुरुष समानता संबंधी विचार प्रस्तुत किए। उन्होंने "वेदों की ओर लौटो" का उद्घोष देते हुए मूर्तिपूजा, जन्माधारित जातिभेद, बाल-विवाह तथा अंधविश्वासों का विरोध किया और शिक्षा को इन कुरीतियों के निवारण का प्रमुख अस्त्र बताया। इसी विचारधारा के परिणामस्वरूप आगे चलकर डी.ए.वी. विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा गुरुकुल शिक्षा संस्थानों की स्थापना हुई, जिन्होंने आधुनिक विज्ञान और भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का सफल समन्वय प्रस्तुत किया।

2. शोध के उद्देश्य

- राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया में आर्य समाज के शैक्षिक आंदोलनों का ऐतिहासिक एवं समाजशास्त्रीय अध्ययन करना।

- डी.ए.वी. एवं गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के सामाजिक योगदान का तुलनात्मक विश्लेषण करना।
- सामाजिक परिवर्तन एवं राष्ट्रीय चेतना के विकास में आर्य समाज की भूमिका का समाजशास्त्रीय मूल्यांकन करना।
- आर्य समाज द्वारा संचालित महिला-शिक्षा आंदोलनों तथा तत्कालीन महिलाओं के संघर्षों का विश्लेषण करना।
- आधुनिक भारतीय शिक्षा-व्यवस्था के विकास में आर्य समाज के योगदान तथा उसकी समकालीन प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।

समाजशास्त्रियों के अनुसार शिक्षा सामाजिक संस्थाओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्था है, जो समाजीकरण, सामाजिक नियंत्रण तथा सांस्कृतिक संरक्षण का कार्य करती है। यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी ज्ञान, मूल्यों तथा सामाजिक मानदंडों के हस्तांतरण का माध्यम है और साथ ही सामाजिक गतिशीलता तथा सामाजिक समानता स्थापित करने का भी एक सशक्त उपकरण है। उन्नीसवीं शताब्दी के भारत में जहाँ शिक्षा जाति एवं लिंग के आधार पर सीमित थी, वहाँ आर्य समाज ने शिक्षा को सार्वभौमिक अधिकार के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया।

'सत्यार्थ प्रकाश' के तृतीय अध्याय में दयानन्द सरस्वती ने बालक-बालिकाओं की शिक्षा, गुरु-शिष्य संबंध, ब्रह्मचर्य-पालन तथा पाठ्यक्रम-निर्धारण संबंधी विस्तृत विचार प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया कि बालक एवं बालिका दोनों को समान रूप से शिक्षा का अधिकार प्राप्त होना चाहिए, तथा शिक्षा का आरंभ यथासंभव बाल्यकाल से ही आरंभ होना चाहिए। उन्होंने शिक्षा में शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास के संतुलन पर विशेष बल दिया — यह दृष्टिकोण आधुनिक समग्र-शिक्षा (Holistic Education) की अवधारणा से पर्याप्त साम्य रखता है। इसके अतिरिक्त उन्होंने संस्कृत भाषा के अध्ययन को अनिवार्य मानते हुए भी विज्ञान, गणित तथा तर्कशास्त्र जैसे आधुनिक विषयों के अध्ययन को भी समान महत्व दिया, जिससे स्पष्ट होता है कि उनका शिक्षा-दर्शन परंपरा एवं आधुनिकता के मध्य द्वंद्व नहीं, अपितु समन्वय स्थापित करने का प्रयास था।

यह उल्लेखनीय है कि दयानन्द सरस्वती ने शिक्षक-प्रशिक्षण (Teacher Training) तथा शिक्षा-पद्धति (Pedagogy) पर भी विचार प्रस्तुत किए। उन्होंने तर्क-आधारित संवाद-पद्धति (Dialogical Method) को महत्व दिया, जिसमें विद्यार्थी को केवल स्मरण-आधारित (Rote) ज्ञान न देकर तर्क, प्रश्न एवं विश्लेषण

करने हेतु प्रोत्साहित किया जाता था। यह पद्धति परवर्ती काल में डी.ए.वी. एवं गुरुकुल — दोनों संस्थाओं में अपनाई गई, जिससे विद्यार्थियों में स्वतंत्र चिंतन-क्षमता का विकास हुआ, जो राष्ट्र-निर्माण हेतु आवश्यक आलोचनात्मक नागरिकता (Critical Citizenship) की नींव तैयार करने में सहायक सिद्ध हुई।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सर्वप्रथम 6-7 सितम्बर 1872 को बिहार के 'आरा' नामक स्थान पर आर्य समाज की एक प्रारंभिक इकाई स्थापित की थी, किंतु यह संगठन अधिक समय तक सक्रिय नहीं रह सका। इसके पश्चात 10 अप्रैल 1875 (चैत्र शुक्ल पंचमी, संवत् 1932) को मुम्बई में विधिवत रूप से आर्य समाज की स्थापना हुई। 1877 में लाहौर में आर्य समाज की एक शाखा स्थापित हुई, जो शीघ्र ही आंदोलन का प्रमुख केंद्र बन गई — विशेषतः पंजाब क्षेत्र में इसका प्रभाव सर्वाधिक रहा। 1885 में 'आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब' की स्थापना हुई, जिसने आगे चलकर शैक्षिक संस्थाओं के संचालन में केंद्रीय भूमिका निभाई।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के देहावसान (1883) के पश्चात उनके शिष्यों — पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी, लाला हंसराज तथा लाला लाजपत राय — ने उनकी स्मृति में शिक्षण संस्थान स्थापित करने का प्रस्ताव रखा। इसके परिणामस्वरूप 1 जून 1886 को लाहौर में प्रथम दयानन्द एंग्लो-वैदिक (डी.ए.वी.) स्कूल की स्थापना हुई, जिसमें लाला हंसराज ने प्रधानाचार्य के रूप में अवैतनिक सेवाएँ प्रदान कीं। डी.ए.वी. संस्थानों ने आधुनिक पाश्चात्य विज्ञान-शिक्षा तथा भारतीय सांस्कृतिक-वैदिक मूल्यों का समन्वय करते हुए ऐसी शिक्षा प्रदान की, जिससे विद्यार्थियों में सामाजिक गतिशीलता, राष्ट्रीय चेतना तथा नेतृत्व-क्षमता का विकास हुआ। कालांतर में डी.ए.वी. आंदोलन का विस्तार सम्पूर्ण भारत में हुआ और यह निजी क्षेत्र के सबसे बड़े शिक्षण-नेटवर्कों में से एक बन गया, जो आज भी सैकड़ों विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के माध्यम से कार्यरत है।

आर्य समाज से जुड़ी अनेक महिला सुधारकों ने भी सक्रिय भूमिका निभाई। विद्यावती तथा लज्जावती जैसी महिला कार्यकर्ताओं ने शुद्धि आंदोलन तथा स्त्री-शिक्षा प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया, और स्वयं सार्वजनिक मंचों से सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध बोलना आरंभ किया — यह उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दी के भारत में स्त्रियों की सार्वजनिक सहभागिता का प्रारंभिक किंतु महत्वपूर्ण उदाहरण है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह महिला आंदोलन की प्रारंभिक लहर (First Wave) का हिस्सा माना जाता है, जिसमें पुरुष सुधारकों के नेतृत्व से आरंभ होकर धीरे-धीरे स्त्रियाँ स्वयं संगठित होकर आंदोलन को आगे ले गईं।

सती प्रथा के विरुद्ध आर्य समाज का संघर्ष दीर्घकालिक रहा है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भी, 1987 में राजस्थान के देवराला में हुई सती-घटना के पश्चात स्वामी अग्निवेश के नेतृत्व में 101 आर्य समाजियों ने

International Research Journal of Education and Technology (IRJEdT)
‖ ISSN: 2581-7795, Impact Factor 5.007 ‖
‖ Peer-Reviewed | Open Access | International Journal ‖
‖ Volume: 02 | Issue: 01 | Jan- 2019 | www.irjweb.com ‖

सती प्रथा के विरुद्ध 18 दिवसीय पदयात्रा निकाली — यह इस बात का प्रमाण है कि आर्य समाज की सुधारवादी प्रतिबद्धता केवल उन्नीसवीं शताब्दी तक सीमित नहीं रही, अपितु एक सतत सामाजिक आंदोलन के रूप में जारी रही। समानांतर रूप से, ईश्वरचंद्र विद्यासागर के प्रयासों से 1856 में पारित विधवा पुनर्विवाह अधिनियम भी उसी व्यापक सामाजिक-सुधार लहर का हिस्सा था, जिसमें ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज तथा आर्य समाज — तीनों संगठनों ने स्त्री-शिक्षा एवं विधवा-पुनर्विवाह को अपने कार्यक्रम का केंद्रीय अंग बनाया।

आर्य समाज से प्रेरित महिला संगठनों, जैसे 'आर्य स्त्री समाज' एवं विभिन्न स्थानीय 'महिला आर्य समाजों' ने भी स्त्री-शिक्षा के प्रचार-प्रसार में सक्रिय भूमिका निभाई। इन संगठनों ने न केवल विद्यालय संचालित किए, अपितु सार्वजनिक सभाओं, गोष्ठियों तथा प्रकाशनों के माध्यम से बाल-विवाह एवं दहेज-प्रथा के विरुद्ध जनमत तैयार करने का कार्य भी किया। पंजाब क्षेत्र में महिलाओं की यह सार्वजनिक सक्रियता समाजशास्त्रीय दृष्टि से विशेष महत्व रखती है, क्योंकि परंपरागत रूप से महिलाओं को घरेलू क्षेत्र (Private Sphere) तक सीमित माना जाता था; आर्य समाज की शैक्षिक संस्थाओं ने महिलाओं को सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sphere) में प्रवेश करने तथा अपनी बात रखने का अवसर एवं आत्मविश्वास प्रदान किया।

कन्या महाविद्यालय, जालंधर जैसी संस्थाओं में अध्ययनरत छात्राओं ने आगे चलकर स्वयं शिक्षिकाओं, समाज-सुधारकों तथा सार्वजनिक कार्यकर्ताओं के रूप में कार्य किया, जिससे 'शिक्षित महिला द्वारा अन्य महिलाओं की शिक्षा' का एक सशक्त शृंखला-प्रभाव (Chain Effect) उत्पन्न हुआ। यह प्रक्रिया समाजशास्त्र में 'सामाजिक पूँजी के अंतर-पीढ़ीगत हस्तांतरण' (Intergenerational Transfer of Social Capital) के रूप में वर्णित की जाती है, जिसमें एक पीढ़ी की शिक्षा अगली पीढ़ी के सशक्तीकरण का आधार बनती है। इस प्रकार आर्य समाज के महिला-शिक्षा आंदोलन का प्रभाव केवल तात्कालिक न रहकर दीर्घकालिक एवं संचयी सिद्ध हुआ।

आर्य समाज ने जन्माधारित जातिभेद का प्रबल विरोध करते हुए गुण-कर्म-स्वभाव पर आधारित वर्ण-व्यवस्था की पुनर्व्याख्या प्रस्तुत की तथा शिक्षा को सभी वर्गों के लिए समान रूप से सुलभ बनाने पर बल दिया। 'शुद्धि आंदोलन' के माध्यम से आर्य समाज ने सामाजिक बहिष्करण के शिकार समूहों को पुनः समाज की मुख्यधारा में सम्मिलित करने का प्रयास किया, जिससे सामाजिक समावेशन (Social Inclusion) को बल मिला। यह दृष्टिकोण समाजशास्त्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह दर्शाता है कि

International Research Journal of Education and Technology (IRJEdT)
‖ ISSN: 2581-7795, Impact Factor 5.007 ‖
‖ Peer-Reviewed | Open Access | International Journal ‖
‖ Volume: 02 | Issue: 01 | Jan- 2019 | www.irjweb.com ‖

शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन का साधन नहीं, अपितु सामाजिक संरचना में परिवर्तन लाने वाले उपकरण के रूप में प्रयुक्त किया गया।

आर्य समाज की शिक्षा-पद्धति ने स्वतंत्रता, स्वाभिमान, स्वदेशी, नैतिकता तथा नागरिक-उत्तरदायित्व जैसे मूल्यों का विकास किया, जो राष्ट्र-निर्माण के महत्वपूर्ण आधार बने। लाला लाजपत राय, जो स्वयं डी.ए.वी. आंदोलन से गहराई से जुड़े थे, आगे चलकर भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के अग्रणी नेताओं में गिने गए। इसी प्रकार गुरुकुल कांगड़ी से शिक्षित अनेक विद्यार्थी राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाने वाले नेताओं एवं समाज-सुधारकों के रूप में उभरे। इस प्रकार आर्य समाज की शैक्षिक संस्थाएँ केवल पाठशालाएँ नहीं थीं, अपितु राष्ट्रीय चेतना तथा नेतृत्व-निर्माण की क्रियाशाला (Workshop) के रूप में कार्य करती थीं।

उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलनों में ब्रह्म समाज (स्थापना 1828, राजा राममोहन राय), प्रार्थना समाज (स्थापना 1867, महादेव गोविंद रानाडे एवं आत्माराम पांडुरंग) तथा आर्य समाज (स्थापना 1875, दयानन्द सरस्वती) प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। तीनों संगठनों ने स्त्री-शिक्षा, विधवा-पुनर्विवाह तथा सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध कार्य किया, किंतु इनके शैक्षिक दृष्टिकोण में महत्वपूर्ण अंतर था। ब्रह्म समाज एवं प्रार्थना समाज मुख्यतः शहरी, अंग्रेजी-शिक्षित उच्च वर्ग तक सीमित रहे तथा पाश्चात्य तर्कवाद से अधिक प्रभावित थे। इसके विपरीत आर्य समाज ने वैदिक परंपरा के पुनरुत्थान के माध्यम से ग्रामीण एवं कस्बाई क्षेत्रों तक शिक्षा का विस्तार किया तथा उत्तर भारत, विशेषतः पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश एवं राजस्थान में एक व्यापक जन-आंदोलन का रूप धारण किया। यह तुलनात्मक दृष्टिकोण स्पष्ट करता है कि आर्य समाज ने सुधार को केवल बौद्धिक विमर्श तक सीमित न रखकर संस्थागत शिक्षा-नेटवर्क के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया, जो इसकी सबसे बड़ी समाजशास्त्रीय विशिष्टता मानी जाती है।

बीसवीं शताब्दी में आर्य समाज की शैक्षिक संस्थाओं का विस्तार निरंतर होता रहा। स्वामी श्रद्धानन्द (पूर्व नाम महात्मा मुंशीराम), जिन्होंने गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की थी, आगे चलकर राष्ट्रीय आंदोलन में भी सक्रिय रहे तथा 1926 में उनकी हत्या के पश्चात भी उनके द्वारा स्थापित शैक्षिक परंपरा निरंतर विकसित होती रही। कन्या गुरुकुलों की स्थापना — जैसे कन्या गुरुकुल, देहरादून — ने महिला-शिक्षा को गुरुकुल पद्धति के अंतर्गत भी संस्थागत रूप प्रदान किया। स्वातंत्र्योत्तर भारत में डी.ए.वी. प्रबंध समिति के अंतर्गत

सैकड़ों विद्यालय, महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय-स्तरीय संस्थान संचालित हो रहे हैं, जो निजी क्षेत्र के सबसे बड़े शिक्षा-नेटवर्कों में गिने जाते हैं। इसी प्रकार गुरुकुल कांगड़ी संस्थान भी विश्वविद्यालय स्तर तक विकसित होकर आज भी संस्कृत, वेद-अध्ययन तथा आधुनिक विषयों की समन्वित शिक्षा प्रदान कर रहा है।

आर्य समाज की शैक्षिक संस्थाओं में विद्यार्थी-सभाओं, वाद-विवाद प्रतियोगिताओं तथा सामाजिक-सेवा गतिविधियों को प्रोत्साहित किया जाता था, जिससे विद्यार्थियों में सार्वजनिक अभिव्यक्ति, नेतृत्व-क्षमता तथा सामूहिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित हुई। यह प्रक्रिया समाजशास्त्रीय दृष्टि से 'नागरिक-समाजीकरण' (Civic Socialization) का उदाहरण है, जिसमें शिक्षण-संस्थाएँ केवल पाठ्यक्रम ही नहीं, अपितु लोकतांत्रिक व्यवहार तथा सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया का भी प्रशिक्षण प्रदान करती हैं। इस प्रकार आर्य समाज की शैक्षिक संस्थाएँ स्वाधीन भारत में लोकतांत्रिक नागरिकता की नींव तैयार करने में भी सहायक सिद्ध हुईं।

आर्य समाज को समाजशास्त्रीय साहित्य में प्रायः 'सांस्कृतिक पुनरुत्थानवादी आंदोलन' (Cultural Revivalist Movement) की संज्ञा दी जाती है, जिसने वैदिक गौरव के पुनर्जागरण के माध्यम से भारतीयों में आत्मसम्मान एवं राष्ट्रीय पहचान की भावना जागृत की। यह पुनरुत्थानवाद पूर्णतः प्रतिगामी (Regressive) नहीं था, अपितु इसने परंपरा का आधुनिक पुनर्व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए राष्ट्रवादी चेतना के निर्माण में योगदान दिया — जो राष्ट्र-निर्माण की समाजशास्त्रीय प्रक्रिया का एक अनिवार्य अंग है।

मैक्स वेबर की दृष्टि से किसी भी सामाजिक आंदोलन की सफलता उसकी वैधता (Legitimacy) अर्जित करने की क्षमता पर निर्भर करती है। आर्य समाज ने अपने सुधारवादी कार्यक्रम को धार्मिक ग्रंथों — विशेषतः वेदों — के प्रामाणिक संदर्भों से जोड़कर प्रस्तुत किया, जिससे उसे परंपरावादी समाज में भी स्वीकार्यता प्राप्त हुई। यह रणनीति समाजशास्त्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसने सुधार को 'बाह्य पाश्चात्य प्रभाव' के स्थान पर 'आंतरिक सांस्कृतिक पुनर्जागरण' के रूप में प्रस्तुत किया, जिससे व्यापक जनसमर्थन जुटाने में सहायता मिली और सामाजिक प्रतिरोध अपेक्षाकृत कम हुआ।

आर्य समाज के शैक्षिक आंदोलन के गहन विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा सदैव शक्ति-संबंधों (Power Relations) से जुड़ी रहती है। औपनिवेशिक शिक्षा-व्यवस्था जहाँ सत्ता के केंद्रीकरण तथा प्रशासनिक नियंत्रण का साधन थी, वहीं आर्य समाज की शिक्षा-व्यवस्था ने स्थानीय समुदायों को शिक्षा के

संचालन एवं निर्णय-प्रक्रिया में सहभागी बनाया। विद्यालय एवं गुरुकुल स्थानीय आर्य समाजों के सक्रिय सहयोग तथा जन-सहभागिता से संचालित होते थे, जिससे समुदाय-आधारित शिक्षा-प्रबंधन (Community-based Education Management) का एक प्रारंभिक भारतीय प्रतिमान विकसित हुआ। यह विकेंद्रीकृत मॉडल आज भी शिक्षा-प्रशासन के अध्येताओं के लिए अध्ययन का विषय बना हुआ है।

इसके साथ ही, यह भी उल्लेखनीय है कि शिक्षा के माध्यम से सामाजिक रूपांतरण की यह प्रक्रिया एकरेखीय (Linear) नहीं, अपितु द्वंद्वात्मक (Dialectical) रही। एक ओर आर्य समाज ने परंपरा का पुनरुत्थान किया, तो दूसरी ओर उसी परंपरा की आलोचनात्मक पुनर्व्याख्या भी प्रस्तुत की — जैसे जन्माधारित जातिभेद को अस्वीकार करना, स्त्रियों के वेदाध्ययन के अधिकार को पुनःस्थापित करना, तथा मूर्तिपूजा एवं कर्मकांडों का विरोध करना। यह द्वंद्वात्मकता ही आर्य समाज को अन्य समकालीन आंदोलनों से विशिष्ट बनाती है और इसे 'रूढ़िवादी पुनरुत्थानवाद' के स्थान पर 'सुधारवादी पुनरुत्थानवाद' की श्रेणी में रखती है।

आज राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, मूल्यपरक शिक्षा, भारतीय ज्ञान परंपरा (Indian Knowledge Systems), लैंगिक समानता, समावेशी शिक्षा तथा नागरिक-उत्तरदायित्व जैसे विषय पुनः शैक्षिक विमर्श के केंद्र में हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में मातृभाषा-आधारित प्रारंभिक शिक्षा, चरित्र-निर्माण, तथा भारतीय ज्ञान-परंपरा के समावेशन पर विशेष बल दिया गया है — जो आर्य समाज द्वारा एक शताब्दी पूर्व प्रतिपादित शैक्षिक सिद्धांतों से गहरा साम्य रखता है। इस संदर्भ में आर्य समाज की शैक्षिक विचारधारा आज भी प्रासंगिक है और परंपरा तथा आधुनिकता के समन्वय हेतु एक प्रेरणादायी ऐतिहासिक प्रतिमान (Model) प्रस्तुत करती है। 2025 में आर्य समाज की स्थापना के 150 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर इसके शैक्षिक योगदान का पुनर्मूल्यांकन विशेष रूप से सामयिक हो गया है।

वर्तमान में लैंगिक समानता से जुड़ी नीतिगत पहलों — जैसे 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' अभियान तथा उच्च शिक्षा में महिलाओं की बढ़ती सहभागिता — को उन्नीसवीं शताब्दी में आर्य समाज द्वारा आरंभ की गई स्त्री-शिक्षा परंपरा के ऐतिहासिक विस्तार के रूप में भी देखा जा सकता है। इसी प्रकार समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) एवं सामाजिक न्याय से जुड़े समकालीन नीति-प्रयास आर्य समाज द्वारा जातिगत भेदभाव के विरुद्ध किए गए प्रारंभिक प्रयासों की ऐतिहासिक निरंतरता को प्रतिबिंबित करते हैं।

इस प्रकार आर्य समाज के शैक्षिक आंदोलन को केवल अतीत की घटना न मानकर, वर्तमान शिक्षा-नीति निर्माण हेतु एक जीवंत ऐतिहासिक संदर्भ-बिंदु (Reference Point) के रूप में देखा जाना चाहिए।

3. निष्कर्ष

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से स्पष्ट होता है कि आर्य समाज ने शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन और राष्ट्र-निर्माण का एक सशक्त उपकरण माना। 1875 में स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित इस आंदोलन ने 1886 के डी.ए.वी. आंदोलन, 1893 के कन्या-शिक्षा आंदोलन तथा 1902 के गुरुकुल कांगड़ी आंदोलन के माध्यम से भारतीय समाज को शिक्षा के दो पूरक मॉडल प्रदान किए — एक ओर आधुनिक विज्ञान-उन्मुख डी.ए.वी. पद्धति, तो दूसरी ओर सांस्कृतिक-वैदिक गुरुकुल पद्धति। साथ ही, महिला-शिक्षा, जातिगत समानता तथा सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध निरंतर संघर्ष के माध्यम से आर्य समाज ने भारतीय समाज में राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक एकता तथा उत्तरदायी नागरिकता के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इसलिए राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया में आर्य समाज के शैक्षिक आंदोलन भारतीय सामाजिक इतिहास के एक प्रभावशाली एवं प्रेरणादायी अध्याय के रूप में स्थापित होते हैं, जिनकी प्रासंगिकता समकालीन भारत की शिक्षा-नीति एवं सामाजिक विमर्श में आज भी बनी हुई है।

आर्य समाज द्वारा विकसित दो प्रमुख शैक्षिक मॉडलों — डी.ए.वी. एवं गुरुकुल कांगड़ी — का तुलनात्मक अध्ययन इस आंदोलन की आंतरिक विविधता तथा व्यावहारिक लचीलेपन को स्पष्ट करता है। डी.ए.वी. मॉडल अंग्रेजी माध्यम, आधुनिक विज्ञान, गणित तथा पाश्चात्य शिक्षा-पद्धति पर आधारित था, जिसका उद्देश्य विद्यार्थियों को औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था तथा प्रशासनिक ढांचे में प्रतिस्पर्धात्मक रूप से सक्षम बनाना भी था, साथ ही उनमें वैदिक मूल्यों का संचार करना भी था। इसके विपरीत गुरुकुल कांगड़ी मॉडल संस्कृत-वैदिक शिक्षा, आवासीय (Residential) व्यवस्था, ब्रह्मचर्य-पालन तथा स्वावलंबी जीवन-शैली पर केंद्रित था, जिसका उद्देश्य सांस्कृतिक निरंतरता तथा स्वदेशी चेतना का सृजन करना था।

दोनों मॉडलों की तुलना से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा के माध्यम से राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया एकरूप (Uniform) नहीं होती, अपितु विभिन्न सामाजिक आवश्यकताओं एवं सांस्कृतिक अपेक्षाओं के अनुरूप विविध रूप धारण करती है। डी.ए.वी. मॉडल ने शहरी मध्यम वर्ग में व्यावसायिक एवं प्रशासनिक गतिशीलता को बढ़ावा दिया, जबकि गुरुकुल मॉडल ने ग्रामीण एवं परंपरागत वर्गों में सांस्कृतिक आत्मविश्वास तथा आत्मनिर्भरता को सुदृढ़ किया। यह द्विमार्गीय (Dual-track) रणनीति समाजशास्त्रीय

दृष्टि से विशेष महत्व रखती है, क्योंकि इसने एक ही आंदोलन के भीतर विविध सामाजिक समूहों की भिन्न-भिन्न आवश्यकताओं को संबोधित करते हुए व्यापक सामाजिक आधार (Social Base) का निर्माण किया।

दोनों संस्थाओं में सामाजिक-सेवा को पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग बनाया गया, जिसके अंतर्गत विद्यार्थियों को साक्षरता-प्रसार, स्वच्छता-अभियान तथा आपदा-राहत जैसी गतिविधियों में सहभागी बनाया जाता था। यह अनुभव-आधारित शिक्षा (Experiential Learning) का प्रारंभिक भारतीय उदाहरण है, जिसने विद्यार्थियों में सामाजिक संवेदनशीलता तथा व्यावहारिक नागरिक-बोध का विकास किया — जो राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया का एक अनिवार्य किंतु प्रायः उपेक्षित आयाम है।

संदर्भ सूची

- दयानन्द सरस्वती, स्वामी **(1875, संशोधित संस्करण 1884).** सत्यार्थ प्रकाश. अजमेर: परोपकारिणी सभा।
- जॉर्डेंस, जे.टी.एफ. **(1978).** दयानन्द सरस्वती: उनका जीवन एवं विचार. दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- जोन्स, केनेथ डब्ल्यू. **(1976). Arya Dharm: Hindu Consciousness in 19th Century Punjab.** बर्कले: यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।
- लाजपत राय, लाला **(1915).** आर्य समाज का इतिहास एवं सिद्धांत. लाहौर: आर्य प्रकाशन।
- आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब. गुरुकुल कांगड़ी: इतिहास एवं शैक्षिक योगदान. हरिद्वार: गुरुकुल कांगड़ी प्रकाशन विभाग।
- दयानन्द एंग्लो वैदिक प्रबंधन समिति. डी.ए.वी. आंदोलन: **1886** से वर्तमान तक. नई दिल्ली: डी.ए.वी. प्रकाशन।
- देसाई, ए.आर. **(1948). Social Background of Indian Nationalism.** बॉम्बे: पॉपुलर प्रकाशन।
- अल्तेकर, ए.एस. **(1938).** प्राचीन भारत में स्त्री की स्थिति. बनारस: मोतीलाल बनारसीदास।
- फॉरबेस, जेराल्डिन **(1996). Women in Modern India.** कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

International Research Journal of Education and Technology (IRJEdT)
‖ ISSN: 2581-7795, Impact Factor 5.007 ‖
‖ Peer-Reviewed | Open Access | International Journal ‖
‖ Volume: 02 | Issue: 01 | Jan- 2019 | www.irjweb.com ‖

- भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय **(2020).** राष्ट्रीय शिक्षा नीति **2020.** नई दिल्ली**:** भारत सरकार।
- दुर्खीम, एमिल **(1956). Education and Sociology.** न्यूयॉर्क**:** फ्री प्रेस।
- दुबे, एस.सी. **(1990). Modernization and Development: The Search for Alternative Paradigms.** दिल्ली**:** विस्ताड़ प्रकाशन।
- वेबर, मैक्स **(1922,** अनूदित **1978). Economy and Society.** बर्कले**:** यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।
- कन्या महाविद्यालय, जालंधर. संस्थागत इतिहास एवं वार्षिक प्रतिवेदन. जालंधर**:** कन्या महाविद्यालय प्रकाशन प्रभाग।
- गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय. गुरुकुल शताब्दी स्मारिका. हरिद्वार**:** गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय प्रकाशन।
- भारत सरकार. सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन एवं राष्ट्रीय आंदोलन**:** एक ऐतिहासिक विवरण. नई दिल्ली**:** प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय।